सन्ध्योपासनप्रयोगविधिः

❁ भाषाटीकासहितः

प्रथम कर्तव्य कर्म—

स्नानकर शुद्ध आसनपर बैठकर बाये हाथकी अनामिका नामक अंगुलीमें तीनकुशाओंसे बनीहुई पवित्री पहरकर इसीप्रकार दक्षिण हाथकी अनामिका नामक अंगुलीमें दो कुशाओंसे बनीहुई पवित्री पहनकर दक्षिण हाथमें २१ वा ५१ कुशाओंकी मार्जनी वा मोटक लेकर उससे वाम हाथमें स्थित जलको अपवित्रः इस मन्त्रसे सब शरीरपर छिड़कना चाहिये।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अपवित्रः पवित्रोवासर्वावस्थांगतो पिवा। यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षंसबाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

अर्थ—जो अपवित्र (बिना स्नान किये) हो। अथवा पवित्र (कृतस्नान) हो वा सर्वावस्थां गतः (स्पृश्यास्पृश्य स्नानादि रहित) शुद्धि बिना भी जो पुरुष विष्णु भगवान् का स्मरण करता है वह बाहर और भीतरसे शुद्ध होता है। मार्जन करते समय ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु ऐसा उच्चारण करे।

कर्तव्य कर्म—

दक्षिण हाथमे जललेकर संकल्प करना चाहिये ।

ॐअद्यैतस्यब्रह्मणोऽह्निद्वितीये परार्द्धे श्री श्वेतवाराहकल्पेजम्बू द्वीपे भरतखंडे आर्यावर्तैक देशान्तर्गते पुण्यक्षेत्रे कलि- युगे कलिप्रथमचरणे अमुकसंवत्सरेऽमु- कमासे अमुकपक्षेऽमुकतिथौ अमुक- वासरेऽमुकगोत्रोत्पन्नोऽमुकनामाहं प्रातः सन्ध्योपासन कर्मकरिष्ये

'ॐ अद्यैतस्येत्यादि संकल्प में सम्वत् मास, पक्ष, तिथि, वार,नाम, गोत्र उच्चारण कर संपूर्ण संकल्प पढ़कर जल छोड़ देवे ॥ इति ॥

कर्तव्य---ओं पृथ्वीति मंत्रस्य० इस वाक्यको पढ़कर आसनकी शुद्धिके वास्ते विनियोग करे (जल छोड़े) अथवा ध्यान मात्र ही करलेवे ।

ॐ पृथ्वीतिमन्त्रस्य मेरुपृष्ठऋषिः

सुतलंछन्दः कूर्मोदेवता आसनेविनि-
योगः ॥

भूमिप्रार्थना---

ॐ पृथ्वित्वयाधृतालोकादेवित्वं विष्णु-
नाधृता । त्वञ्चधारयमांदेविपवित्रं कुरु-
चासनम् ॥

'पृथ्वि त्वया०' यह भी मंत्र ध्यानका है, अर्थ--
हे पृथ्वि ! तुमने चतुर्दश लोकों को धारण किया है और
हे देवि ! तुमको विष्णुभगवान् ने धारण किया है तुम हमको
धारण करो और आसन को पवित्र करो !

कर्तव्य---इस मन्त्रसे आसनपर जल छिड़कना चाहिये ।

बामेवहून्कुशान्दक्षिणे पाणौसपवित्रं
कुशत्रयञ्चधृत्वा सप्रणवगायत्र्याशिखां-
वध्वाऐशान्याभिमुखमाचम्य ऋतमित्या-
दिनापुनराचामेत ॥

मन्त्रार्थः—बांयें हाथ में ५१ कुशाओं की मार्जनी या मोटक ग्रहण कर और दहिने हाथ में तीन कुशा धारण करे फिर ॐकार सहित गायत्री के मन्त्रको बोलकर चोटी में गांठ लगावे। फिर ईशान की तरफ मुख कर आचमन करे पीछे शन्नोदेवी इस मन्त्र को पढ़कर तीन बार आचमन करे।

शन्नोदेवीरभीष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंयोरभिस्रवन्तुनः॥

मंत्रार्थ—(दिव्य) आपः (जल) नः (हमारे) सम्भवन्तु (कल्याण कारक हों) और अभीष्टये (अभीष्ट (यथेष्ट) सिद्धिके लिये पीतये (पीनेके लिये हों।) शंयोः (कल्याणके लिये) अभि सूवन्तु (चारों तरफ वर्षा करे।)

इस मन्त्रसे विनियोग (जल) छोड़ देवे।

ॐ अघमर्षणसूक्तस्याघमर्षण ऋषिरनुष्टुप्छन्दो भाववृतोदेवता अश्वमेधावभृथे विनियोगः॥

विनियोग छोड़कर ऋतंचसत्यं इस मन्त्रसे तीनवार आचमन करे।

ॐ ऋतञ्चसत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्य-जायत। ततोरात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः। समुद्रा दर्णवादधिसंवत्सरो-अजायत। अहोरात्राणिविदधद्विश्वस्य-मिषतोवशी। सूर्याचन्द्रमसौधातायथा-पूर्वमकल्पयत्। दिवंचपृथिवींचांतरिक्ष मथोस्वः ॥१॥

अर्थ—महा प्रलय के समय (ऋतंचसत्यंच) ऋत और सत्यनाम परब्रह्म था। (ततः) उसी समय में (रात्रोः) रात्रि उत्पन्न हुई (समस्त अन्धकारमय हो गया) (ततः) महा प्रलयके पीछे (सृष्टिके आरम्भमें) (अभीद्धात्) प्रकाशमान (तपसः) तपरूप अदृष्टसे (अर्णवः) जलमय (समुद्रः) समुद्र उत्पन्न हुआ। (ततः) पीछे (अर्णवात्) समुद्रसे (अधि) पीछे (मिषतः) महा प्रलयमें लुप्त (विश्वस्य) इस विश्वके (वशी) रचनेमें समर्थ [धाता] ब्रह्मा [अजायत] उत्पन्न

हुआ। [धाता] उस ब्रह्माने [यथापूर्वं] प्रथम सृष्टिकी भांति [अहोरात्राणि] रात्रि और दिनको [विदधत्] बनाने वाले [सूर्य्याचन्द्र मसौ [सूर्य्य चन्द्रमाको [अकल्पयत्] बनाया [ततः] पीछे [सम्वत्सरः] सम्वत्सर [अजायत] उत्पन्न हुआ। [अथो] पीछे [दिवंच] दिवलोक [पृथ्वीं] पृथ्वीको [अन्तरिक्ष] अन्तरिक्षलोक [स्वः] स्वर्गादि लोकोंको [अकल्पयत्] उत्पन्न किया जैसे समस्त संसारको पूर्व उत्पन्न किया। ऐसे ही सृष्टिके आदिमें उत्पन्न सर्वदा होते रहेंगे। पुनः प्रलय होगी। फिर आरम्भ होगा। इस प्रकार सर्वदासे सृष्टि क्रम चलता है।

कर्तव्य---इन्द्रिय स्पर्श आगेके मंत्रोंसे करना।

ओं वाक् २ ओं प्राणः २ ओं चक्षुः २ ओं श्रोत्रम् २ ओं नाभिः ओं हृदयं ओं कण्ठः ओं मुखम् ओं शिरः ओं शिखा ओं बाहुभ्यांयशोबलम् ओं पृष्ठे।

ॐ वाक् २ इससे मुखका ॐ प्राणः २ इससे नाकका ॐ चक्षुः २ इससे नेत्रोंका ॐ श्रोत्रम् २ इससे कानका ॐ नाभिः इससे नाभिका ॐ हृदयं इससे हृदयका ॐ कण्ठः

इससे कण्ठका ॐ मुखम् इससे मुखका ॐ शिरः इससे शिर का ॐ शिखा इससे चोटीका ॐ बाहुभ्यांयशोबलम् इससे दोनों भुजाओंका ॐ पृष्ठे इससे पीठका स्पर्श करना चाहिये ।

ततोवारिणात्मानंवेष्टयित्वा सप्रणव-गायत्र्यारक्षां कुर्यात् ॥

कर्तव्यकर्म—फिर हाथमें जल लेकर गायत्री मंत्र पढ़कर शरीरके चारों तरफ हाथका परिक्रमण करके जल छोड़ देना, अर्थात् गायत्री मन्त्रसे अपनी रक्षा करना चाहिये ।

पीछे आगे लिखे हुये गायत्री मंत्रको पढ़कर मार्जन करना चाहिये ।

ओं भूः पुनातु शिरसि । ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः । ओं स्वः पुनातु कण्ठे । ओं महः पुनातु हृदये । ओं जनः पुनातु नाभ्याम् । ओं तपः पुनातु पादयोः । ओं सत्यम्पुनातु शिरसि । ओं खम्ब्रह्म पुनातु सर्वत्र ।

कर्तव्यकर्म—इन मंत्रों में पठित शिरसे शिरपर नेत्रसे नेत्रों पर कंठसे कण्ठों पर हृदयसे हृदयपर नाभ्यांसे नाभीपर पादसे चरणों पर। सर्वत्रसे सब शरीर पर मार्जन करना चाहिये।

ततः ॐकारस्यब्रह्माऋषिर्गायत्रीछन्दोऽग्निर्देवता शुक्लोवर्णः सर्वकर्मारम्भे विनियोगः ॥

इसके अनन्तर हाथमें जल ले पहला एक विनयोग छोड़े। अर्थ—ओंकारका ब्रह्मा ऋषि गायत्री छन्द अग्नि देवता है शुक्ल वर्ण सम्पूर्ण कर्मोंके आरम्भ में विनियोग है। अर्थात् सब कर्मों के आरम्भमें ओंकारका उच्चारण किया जाता है ॥ १ ॥

सप्तव्याहृतीनांविश्वामित्रजमदग्निभरद्वाजगौतमात्रिवसिष्ठ कश्यपा ऋषयः। गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहती पंक्तित्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांस्यग्निवाय्वादित्यबृहस्पति-

वरुणेन्द्र विश्वेदेवादेवता: । अनादिष्ट-प्रायश्चित्ते प्राणायामे विनियोग: ॥

* ॥ अथ द्वितीय विनियोगः ॥ २ ॥ सप्त ७ व्याहृतियों के अनुक्रम से विश्वामित्र १, जमदग्नि २, भरद्वाज ३, गौतम ४, अत्रि ५, वशिष्ठ ६, और कश्यप ७, ऋषि हैं ॥ तथा गायत्री १, उष्णिक २, अनुष्टुप् ३, बृहती ४, पंक्ति ५, त्रिष्टुप् ६, व जगति ७, ये सात उनके छन्द हैं। और अग्नि १, वायु २, आदित्य ३, बृहस्पति ४, वरुण ५, इन्द्र ६, व विश्वेदेवा ७, ये सातव्याहृतियों के देवता हैं ॥ और अनादिष्ट प्रायश्चित प्राणायाम में विनियोग है इति ॥ २ ॥

गायत्र्याविश्वामित्र ऋषिर्गायत्रीछन्द: सवितादेवताअग्निर्मुख मुपनयने प्राणायामेविनियोग: ।

अथ तृतीय विनियोगः ॥३॥ गायत्रीका विश्वामित्र ऋषि गायत्री छन्द है, सविता देवता अग्नि मुख उपनयन प्राणायाममें इसका विनियोग है, इति ॥ ३ ॥

शिरस: प्रजापतिर्ऋषिस्त्रिपदा गायत्री-

छन्दो ब्रह्माग्निवायुसूर्यो देवता यजुः प्राणायामेविनियोगः ।

अथ चतुर्थ विनियोगः ॥ ४ ॥ "शिरसः" इस मंत्र का प्रजापति ऋषि है, त्रिपदा गायत्री छन्द है, ब्रह्मा, अग्नि, वायु, व सूर्य, ये देवता हैं, यजुः---प्राणायाम में विनियोग है इति ॥ ४ ॥

इतिऋष्यादिकंस्मृत्वाबद्धासनः सम्मिलितनयनोमौनीप्राणायामत्रयंकुर्यात् ।

कर्तव्य कर्मः---ऊपरोक्त विनियोगमें कहेहुए ऋषि छंद देवताका ध्यानकर आसनपर बैठकर नेत्र बन्दकर पूरक कुम्भक रेचक यह तीन प्राणायाम करना चाहिये ।

तत्र वायोरादानकाले पूरकनाम प्राणायामः । तत्र नीलोत्पलदल श्यामंचतुर्भुजं विष्णुंनाभौध्यायेत् ।

धारणकाले कुम्भकः तत्र कमलासनं रक्तवर्णंचतुर्मुखंब्रह्माणंहृदिध्यायेत् ।

त्यागकालेरेचकः तत् ललाटदेशे श्वेत-वर्णं त्रिनयनं शिवं ध्यायेत् ।

१ पूरक प्राणायाम—करनेकी यह विधि है कि अपने दक्षिण नाकके छिद्रको दक्षिण हाथके अंगूठेसे दबाकर वाम नाकके स्वरसे सप्तव्याहृति सहित आपोज्योति मंत्र तक मानसिक गायत्री मंत्रको ३ वार पढ़ता हुआ और अपनी नाभिमें नीलकमलके समान श्यामवर्ण वाले विष्णुभगवानका नाभिमें ध्यान करता हुआ वायुको खींचे । यह पूरक प्राणायाम है ।

२ कुम्भकमें प्रथम पूरक प्राणायामके पूर्व तीन वार गायत्री मंत्र समाप्त होते ही नाकके वाम स्वरको मध्यमादि दक्षिण हाथकी अंगुलियोंसे दबाकर पूर्वोक्त प्रकारसे तीन वार गायत्री मंत्र पाठ करता हुआ प्रथम ऊपर चढ़ाये हुये वायुको रोक देवे और उस समय पूर्वोक्त प्रकारसे कमलासनपर स्थित रक्तवर्ण वाले चार मुखवाले ब्रह्माजीका हृदयमें ध्यान करे । ऊपर चढ़ाये हुये वायुको रोकनेके कारण इसको कुम्भक प्राणायाम कहते हैं ।

३ रेचक प्राणायाम—जिस वाम स्वरसे वायुको पूर्व खींच चुके हो उस नाकके छिद्रको खोलकर तीन वार पूर्वोक्त प्रकारसे गायत्री मंत्र जप करते हुये ललाटमें श्वेतवर्ण वाले

त्रिनेत्र शिवजीका ध्यान करते हुये धीरे धीरे वायुको निकाल देना चाहिये । इसको रेचक प्राणायाम कहते हैं ।

त्रिष्वप्येतेषु प्रत्येकंत्रिर्मंत्राभ्यासः प्रत्येकमोंकारादिसप्तव्याहृतयः ॐकारादिसावित्री ॐकारद्वयमध्यस्थम् शिरश्चेतितस्य स्वरूपं—ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि । धियोयोनः प्रचोदयात् । ॐ आपोज्योतीरसोऽमृतंब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम् ॥

ऐसे इन तीनों प्राणायामों में [वायुके खींचते समय रोकते समय छोड़ते समय] एक २ के प्रति अलग २ तीन २ वार सात व्याहृति सहित आपोज्योति रसोमृतं मंत्रको पढ़े । प्राणायाम मंत्रका स्वरूप कहते हैं जिन शब्दों के साथ जुदा २ ओंकार है ऐसी सात व्याहृतियां हैं । फिर ओंकार जिसके आदिमें है ऐसी एक गायत्री है ।

फिर दो ओंकारों के मध्यस्थ शिर अर्थात् 'आपोज्योतिः' यह मंत्र है इस प्रकार प्राणायामके मंत्रका स्वरूप है। सप्त व्याहृति, गायत्री, 'आपोज्योतिः' ये तीन मंत्र मिलकर प्राणायामका मंत्र होता है इनमें पहले गायत्रीका अर्थ लिखते हैं—सवितुः अर्थात् सबको उत्पन्न करनेवाले सूर्यका (सूर्यमण्डल अभिधेय ब्रह्मका) वरेण्य याने प्रार्थना करने योग्य अर्थात् पुण्यात्मा जनों से नियम आदि द्वारा सर्वदा ध्यान करने योग्य ऐसा भर्गः अर्थात् भजने वालों के पापको नष्ट करनेवाला देव। यानी वृष्टि करना आदि गुणों से युक्त अनन्त प्रकाशरूप [तत्] उस तेजस्वरूपको हम ध्यान करते हैं कि जो तेज [नः] हमारी बुद्धियों को (प्रचोदयात्) अर्थात् अच्छे कामों में (लगावे) वह तेज कैसा है कि भूलोक १; भुव २; स्वर्ग ३; मह ४; जन ५; तप ६; सत्य ७; इन सातों लोकों का अन्तःस्वरूप है अर्थात् इनका अधिष्ठातृदेवता है अर्थात् चराचर त्रिलोकीस्वरूप हैं।

ॐ 'आपोज्योती०' इति—फिर वह तेज कैसा है कि आपः अर्थात् जल स्वरूप है; ज्योतिरूप हैं और रसरूप हैं और अमृत अर्थात् मोक्ष स्वरूप है (भूः; भुवः; स्वः;) त्रिलोकीका अधिष्ठातृदेव वा त्रिलोकीस्वरूप हैं ॥ इति ॥

ततः सूर्यश्चमेतिब्रह्माऋषिः प्रकृति-

श्छन्दः सूर्यो देवता अपामुपस्पर्शने विनि-योगः ।

सूर्यश्चमेति—; इस मंत्रका ब्रह्मा ऋषि है प्रकृति छन्द है सूर्य देवता है जलके उपस्पर्शमें विनियोग है (विधिः) यह विनियोग प्रातःकालकी सन्ध्यामें प्राणायामके अनन्तर किया जाता है फिर दाहिने हाथमें जल लेकर (सूर्यश्च इस मन्त्रको पढ़कर उस जलसे तीन वार आचमन कर लेवे ॥

ओं सूर्यश्च मामन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्तां । यद्रा-त्र्यापापमकार्षं मनसावाचाहस्ताभ्यां प-द्भ्यामुदरेणशिश्ना । रात्रिस्तदवलुम्पतु । यत्किंचिद्दुरितम्मयि । इदमहमापोऽमृत योनौसूर्येज्योतिषि जुहोमि स्वाहा । इति प्रातराचामेत् ॥

मंत्रार्थ—सूर्य्य देवता वे मन्युकृत पाप अर्थात् अंग-उपांग-

रहित यज्ञके पापोंसे (मां) मेरी रक्षा करें। अथवा (मन्यु) क्रोध और मन्युपति कहिये इन्द्रिय, ये सब मन्युकृति अर्थात् क्रोधसे किए हुए पापोंसे रक्षा करें। अर्थात् मुझसे कोई ऐसा क्रोध नहीं बन सके कि जिससे मैं नहीं करने लायक अयोग्य काम करूं। जो पाप मैंने रात्रिमें मन करके तथा वाणी करके व हाथों करके पैरों करके उदर करके लिंगइन्द्रिय करके जो किया है उस सम्पूर्ण पापको रात्रि स्वरूप भगवान (अवलुपतु) नाश करे। जो कुछ अन्य अवशिष्ट मेरे पाप हैं इनको मैं हृदय कमलमें स्थित ज्योति अर्थात् प्रकाश रूप अमृतकी योनि सूर्यमें जुहोमि स्वाहा) अर्थात हवन करता हूं (वह पाप दग्ध हो जाय) इति ॥विधिः॥ इस मन्त्रको पढ़कर प्रातःकाल आचमन करे। यहां विशेष बात यह है कि मध्यान्हसन्ध्या और सायं-कालकी सन्ध्याका प्रकार सब एक है केवल विनियोग तथा आचमनके मन्त्र अलग २ हैं ॥

मध्यान्ह संध्याका विनियोग।

ॐ आपः पुनंत्विति विष्णुर्ऋषि-रनुष्टुप्छन्दः आपोदेवताअपामुपस्पर्शने विनियोगः ॥

मन्त्रार्थ—'आपः पुनन्तु०' इसका मन्त्रार्थ विष्णु ऋषि है; अनुष्टुप् छन्द है। आप (जल) देवता है। जलों के उपस्पर्शमें (आचमन करनेमें) विनियोग है।

ओं आपः पुनन्तुपृथिवीं पृथ्वीपूता पुनातुमां। पुनन्तुब्रह्मणस्पतिर्ब्रह्मपूता पुनातु मां। यदुच्छिष्टमभोज्यंचयद्वा दुश्चरितं मम। सर्वंपुनन्तु मामापोऽसतां च प्रतिग्रहꣳस्वाहा। इतिमध्याह्नआचामेत॥

अर्थ—आप (जल) पृथ्वीको जलसे पवित्र पृथ्वी इस मेरे शरीरको पवित्र करें। और पवित्र हुआ देह मुझ क्षेत्रज्ञको पवित्र करे; वे जल केवल देहको ही पवित्र न करें किन्तु 'पुनन्तु ब्रह्मणस्पति' अर्थात् ज्ञानके पति आत्माको भी पवित्र करें। जो जूठा और अभोज्य याने नहीं खाने योग्य भोजन हमने किया है और जो दुश्चरित अर्थात् हमने कुछ खोटा काम किया हो वा 'असतां च प्रतिग्रहं' अर्थात् शूद्रादिकों का प्रतिग्रह (दान) से अपवित्र मुझको जल पवित्र करें। (स्वाहा)

अर्थात् आचमन द्वारा हमारा यह सब पाप नष्ट हो जावे इति मध्यान्हसन्ध्या ।

अग्निश्चमेतिरुद्रऋषिः प्रकृतिश्छन्दः । अग्निर्देवताअपामुपस्पर्शनेविनियोगः ॥

सायंकालकी सन्ध्याके विनियोगका अर्थ--अग्निश्चमा०' इस मन्त्रका रुद्र ऋषि, प्रकृति छन्द, अग्नि देवता है। जलों के उपस्पर्शमें (आचमन करनेमें) विनियोग है ॥

ओं अग्निश्चमामन्युश्चमन्युपतयश्च-मन्युकृतेभ्यः । पापेभ्योरक्षन्तां यद्ह्ना-पापमकार्षं । मनसावाचाहस्ताभ्यां । प-द्भ्यामुदरेणशिश्ना । अहस्तदवलुम्पतु । यत्किंचिद्दुरितंमयि । इदमहमापोऽमृत-योनौसत्येज्योतिषिजुहोमिस्वाहा । इत्य-नेनसायमाचामेत् ॥

मन्त्रार्थः--अग्नि और मन्यु अर्थात् यज्ञ तथा यज्ञपति इन्द्रा-

दिक देवता अथवा क्रोध और क्रोधपति इन्द्रियां ये सब अङ्ग-उपांगरहित यज्ञों के करनेसे उत्पन्न पापों से अथवा क्रोधसे उत्पन्न हुए पापों से मेरी रक्षा करें। जो पाप मैंने दिनमें किये हों उनको और मन, वाणी, हाथ पांव, उदर, लिङ्गसे, किये हों उन संपूर्ण पापों को अहः अर्थात् दिन (प्रकाश स्वरूप परमात्मा) नष्ट करे और जो कुछ मेरे अन्तर्गत पाप हैं उनको यह जल नष्ट करे। और समस्त पापों को अमृतकी योनि सत्य ज्योतिस्वरूप परमात्मामें हवन करता हूं (स्वाहा) अर्थात् भस्म करता हूं। इस प्रकार इस मन्त्रको पढ़कर ३ बार आचमन करे। यह सायंकालका आचमन है।

ततआपोहिष्ठेत्यादिऋचस्यसप्तभिः पदै शिरसि अष्टमेनभूमौ नवमेन पुनः शिरसि कुशात्रयेणजलंक्षिपेत् ॥

कर्तव्य कर्म—फिर 'आपोहिष्ठा०' इत्यादि तीन ऋचाओं के सात पदोंको अलग २ उच्चारण कर सात बार शिरपर आठवें पदसे भूमिपर नवमें पदसे फिर शिरपर तीन कुशाओं करके जलका अभिषेक करे।

ओं आपोहिष्ठेत्यादिऋचस्य सिन्धुद्वीप-ऋषिर्गायत्रीछन्दः आपोदेवता मार्जने विनियोगः ॥

मन्त्रार्थः—'आपोहिष्ठा०' इत्यादि तीनों ऋचाओंके सिन्धुद्वीप ऋषि, गायत्री छन्द, (आप) जल देवता है, मार्जनमें विनियोग है, इस मन्त्रसे विनियोग छोड़कर आगे वाले आपोहिष्ठा मन्त्रसे मार्जन करना चाहिये।

१ ॐ आपोहिष्ठामयोभुवः। २ ॐ तानऊर्जेदधातन। ३ ॐ महेरणाय चक्षसे। ४ ॐ योवः शिवतमोरसः। ५ ॐ तस्यभाजयतेहनः। ६ ॐ उशतीरिवमातरः। ७ ॐ तस्माअरङ्गमामवः। ८ ॐ यस्यक्षयायजिन्वथ। ९ ॐ आपोजनयथाचनः॥

हे आपः (हे जल) (हि) जिस कारण तुम सुख देनेवाले हो इसीलिये (नः) हमको अपने रसके अनुभव करनेके लिये पुष्टिकारक अन्नके देनेवाले हो। [महेरणाय] अर्थात् महत्‌रमणीय ब्रह्मके दर्शनके लिये (दधात) सामर्थ्ययुक्त अर्थात् हमको ब्रह्मका साक्षात्कार होने योग्य

करो ॥ १ ॥ हे आपः (जल !) तुम्हारे शिवतम [केवल] सुखके ही हेतुस्वरूप रसको] इस लोकमें हमको प्राप्त कराओ, (कैसे) जैसे प्रीतियुक्त माता अपने बालकको स्तनों का दूध (रस) पिलाती हैं उसी भांति हमको आप अपना दिव्य रस पिलाओ ॥ २ ॥ हे आपः ! [तस्माअरङ्गमामवः] तुम्हारे रससे हम सदा तृप्त हों । कि (यस्य क्षयाय जिन्वथ) जिस जगत् के आधार भूत रसके एक अंशसे तुम इस जगत् को तृप्त करते हो । हे आपः ! तुम हमको उस रसके भोगनेमें प्रवृत्त करो ॥ ३ ॥

ततः ॐकारेणजलमादाय वारत्रयं द्रुपदांपठित्वातज्जलं शिरसि क्षिपेत् ।

कर्तव्य कर्म—इसके बाद हाथमें जललेकर तीन वार 'द्रुपदा०' इस मन्त्रको पढ़कर उस जलको शिरपर डाले ।

ॐ द्रुपदादिवेत्यस्य कोकिलोराजपुत्रऋषिरनुष्टुप्छन्दः आपोदेवता सौत्रामण्यवभृथेविनियोगः ॥

मंत्रार्थः - 'द्रुपदादि०' इस मन्त्रका कोकिलराजपुत्र ऋषि

और अनुष्टुप् छन्द (आपः) जल देवता है। सौत्रामण्य अवभृथमें इसका विनियोग है। इससे विनियोग छोड़कर द्रुपदा दि० इस मंत्रसे शिरपर जल छिड़कना चाहिये

ॐ द्रुपदादिवमुमुचानः स्विन्नः स्नातोमलादिव पूतंपवित्रेणेवाज्यमापः शुंधंतुमैनसः ॥

द्रुपदादिवेति जैसे पादुकासे अलग होता हुआ पुरुष पादुकाकी (चुभना आदि) पीड़ासे दूर होता है, जैसे स्विन्न अर्थात् स्वेदयुक्त पुरुष स्नात (स्नान करके मलसे रहित होता है और (पूतं पवित्रेणेवाज्यं) तपाकर वस्त्रमेंसे छान करके जैसे घृत पवित्र हो जाता है तैसेही यह जल मुझको पापसे जुदाकर शुद्ध करे।

ततः करस्थंजलंनासिकायांसंयोज्याऽऽयतासुरनायतासुर्वात्रिः सकृद्वाऽघमर्षणं जपेत् ।

अघमर्षणकी विधि—श्वासको रोककर अथवा विना रोके हुए ही हाथमें स्थित हुए जलको नासिकामें स्पर्श करकर तीन बार अथवा एक बार अघमर्षण मंत्र, ऋतञ्च० इस मन्त्रको पढ़कर पृथ्वीपर जल छोड़ना चाहिये।

ॐ अघमर्षणसूक्तस्याघमर्षण ऋषिरनुष्टुप्छन्दो भाववृतोदेवता अश्वमेधावभृथे विनियोगः ॥

(मन्त्रार्थ) अघमर्षण सूक्तका अघमर्षण ऋषि और अनुष्टुप् छन्द एवं भाववृत देवता है। अश्वमेध अवभृथमें विनियोग है।

इस मंत्रसेजल छोड़कर।

ॐ ऋतञ्चसत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ततोरात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः। समुद्रा दर्णवादधिसंवत्सरो-अजायत। अहोरात्राणिविदधद्विश्वस्य-मिषतोवशी। सूर्याचन्द्रमसौधातायथा-पूर्वमकल्पयत्। दिवंचपृथिवींचांतरिक्ष मथोस्वः ॥

ततः अन्तश्चरसीतितिरश्चीनऋषिः।

अनुष्टुप्छन्द आपोदेवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः ।

'मन्त्रार्थ' 'अन्तश्चरसि' इस मन्त्रका तिरश्चीन ऋषि और अनुष्टुप् छन्द तथा जल देवता है । जलोंके उपस्पर्शमें, आचमन करनेमें इसका विनियोग है ।

विधि---जल लेकर विनियोग पढ़कर जल छोड़कर 'अन्तश्चरसि' इस मन्त्रको पढ़कर तीन वार आचमन करना चाहिये ।

ॐ अन्तश्चरसिभूतेषुगुहायांविश्वतां मुखः । त्वंयज्ञस्त्वं वषट्कार आपोज्योतीरसोऽमृतम् । इत्यनेनाचामेत् ॥

अन्तश्चरसि इति—हे (आप) जल ! तुम सव प्राणियों के अन्तःकरणके भीतर विचरते हो, इस ब्रह्माण्डरूपी गुफामें सव प्रकारसे तुम्हारी गति है, तुम ही यज्ञ हो तुम ही वषट्कार हो तुम ज्योतिः स्वरूप हो और अमृतस्वरूप हो ॥ इति ॥

ततउत्थाय ॐ भूर्भुवः स्वरितिगायत्र्यापुष्पमिश्रितजलाञ्जलिं सूर्याभिमुखं क्षिपेत् ॥

विधि---अन्तश्चरसि० पढ़कर आचमन करे। पीछे खड़ा होकर 'ॐ भूर्भुवः स्वः०' इत्यादि गायत्री मंत्रको पढ़कर पुष्पमिश्रित जलकी एक अञ्जली सूर्यके सन्मुख देवे। यदि समय लुप्त हो गया हो तो तीन अञ्जलि देना चाहिये।

ततो भूम्यलग्नगुल्फतलभागो वा भूमिलग्नैकचरणोवा भूमिलग्नार्द्धचरणो वा प्रातः सायंकृताञ्जलिर्मध्याह्ने ऊर्ध्व-बाहुः सूर्यमुपतिष्ठेदेभिर्मंत्रैः॥

विधि---(यह सूर्य ब्रह्म है ऐसे मंत्रके ध्यानसे प्रदक्षिणा करता हुआ जल छोड़े यह किसीका मत है) फिर पृथ्वीपर एंड़ी नहीं टिके ऐसे दोनों पैरोंसे अथवा समग्र एक ही पैरसे सूर्यके सम्मुख खड़ा होकर अथवा एक पैर भी आधा ही टिके इस प्रकार खड़ा होकर प्रातःकाल और सायंकालमें अञ्जली बांधकर दोनों हाथ सूधे मिलाकर मध्याह्न समयमें ऊपरको हाथकर सूर्यके सम्मुख खड़ा हो कर 'उद्वय०' इत्यादि मंत्रोंको पढ़ना चाहिये। इसको उपस्थान कहते हैं। इन चारों मंत्रोंके ४ विनियोग एक साथ पढ़कर जल छोड़ना चाहिये अथवा केलव विनियोगोंका पाठ कर लेवे। जल नहीं छोड़कर उपस्थान करना चाहिये।

ॐ उद्वयमित्यस्य हिरण्यस्तूप ऋषि-

रनुष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता सूर्योपस्थाने विनियोगः ॥

उदुत्यमितिप्रस्कण्व ऋषिर्गायत्रीछंदः सूर्यो देवता सूर्योपस्थानेविनियोगः ॥

ॐ चित्रमित्यस्यकौत्सऋषिस्त्रिष्टुप्छंदः सूर्यो देवतासूर्योपस्थानेविनियोगः ॥

ॐ तच्चक्षुरितिदध्यङ्ङाथर्वणऋषिरक्षरातीतपुरउष्णिक्छन्दः सूर्यो देवतासूर्योपस्थानेविनियोगः ॥

(मन्त्रार्थः) 'उद्वयं' इस मन्त्रका प्रस्कण्व ऋषि अनुष्टुप् छन्द सूर्य, देवता है। सूर्यके उपस्थानमें इस मंत्रका विनियोग है।

",उदुत्यं" इस मंत्रका प्रस्कण्व ऋषि गायत्री छन्द सूर्य देवता है। सूर्यके उपस्थानमें विनियोग है।

"चित्रं०" इस मंत्रका कौत्स ऋषि त्रिष्टुप् छन्द

सूर्य देवता है, सूर्यके उपस्थानमें इसका विनियोग है ॥

"तच्चक्षु" इस मन्त्रका दध्यङ् आथर्वण ऋषि, अनुष्टुप् सूर्यके उपस्थानमें इसका विनियोग है ॥

ओं उद्वयंतमसस्परिस्वः पश्यंतउत्तमम् ।
देवंदेवत्रासूर्यमगन्मज्योतिरुत्तमम् ॥

ओं उदुत्यंजातवेदसं देवंवहंति केतवः ।
दृशेविश्वायसूर्यम् ॥

ओं चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्यवरुणस्याग्नेः आप्राद्यावा पृथिवी-अन्तरिक्षꣳ सूर्य आत्माजगतस्तस्थुषश्च ॥

ओं तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् ।
पश्येमशरदः शतञ्जीवेमशरदः शतꣳ शृणुयामशरदः शतम्प्रब्रवामशरदः शत-म्भूयश्चशरदः शतात् ॥

"उद्वयन्तमसः" अन्धकार रूप लोकसे ऊपर विराजमान, स्वः, उत्तम स्वर्गलोकको देखते हुये और देव लोकमें सूर्यको देखते हुए 'उत्तम ज्योतिः' यानी ब्रह्म स्वरूपको हम प्राप्त हों। इस मंत्रके विनियोगमें कितने ही मनुष्य 'हिरण्य स्तूप-ऋषि' ऐसा पाठ बोलते हैं। यह पाठ भाष्यसे विरुद्ध है।

(मंत्रार्थः) (केतवः) बुद्धिकी बढ़ानेवाली किरणें (जात-वेदसं) जिनसे धन वा ज्ञान उत्पन्न होता है उस प्रसिद्ध सूर्यको जगतके देखनेके लिये, उदयाचल पर्वतसे ऊपरको प्राप्त करती हैं॥

[मं०] (चित्रं) सबको आश्चर्य करानेवाले सूर्य देव उदय होता है। वह सूर्य (देवानामनीकं) किरण समूहोंके आश्रय वा पुञ्ज है, और मित्र, वरुण, अग्नि, इन देवताओंके नेत्र हैं; अर्थात् संपूर्ण जगतके नेत्र हैं और उदय होते हुए वह सूर्य; स्वर्ग भूमि को अपने तेज करके पूर्ण करते हैं; और स्थावर जंगम जगतके अन्तर्यामी आत्मा हैं; अर्थात् ब्रह्मस्वरूप हैं॥ ३॥

(मंत्रार्थः) 'तत्' वह समस्त जगतका नेत्रस्वरूप सूर्य पूर्व दिशामें उदय होता है और (देवहितं) यानी देवताओंसे स्थापित किया हुआ अथवा देवताओंके (प्रिय) शुक्र (स्वच्छ) ज्योतिः स्वरूप है। ऐसे सूर्यकी कृपासे हम सौ १०० वर्षतक

देखें अर्थात् सौ १०० वर्षतक हमारे नेत्र बने रहें; और १०० वर्षतक जीवें और सौ १०० वर्षतक श्रवण करें; यानी हमारी श्रोत्रइंद्रिय (कान) स्पष्ट बनी रहें। और सौ १०० वर्षतक अदीन रहें; यानी किसीसे कुछ याचना न करें फिर सौ १०० वर्ष पीछे भी हम देखें सुनें जीवें ॥

अङ्गन्यास विधि---

ओं हृदयायनमः। ओं भूः शिरसे स्वाहा। ओं भुवः शिखायैवषट्। ओं स्वः कवचायहुं। ओं भूर्भुवः नेत्राभ्यां वौषट्। ओं भूर्भुवः स्वरस्त्राय फट्। इत्यङ्गानि त्रिरावर्त्य ॥

॥ अथ अङ्गन्यासविधिः ॥ ॐ हृदयाय नमः ॥ ऐसे उच्चारण कर हृदयमें हाथ लगावै; १ फिर मंत्र अलग २ पढ़कर शिर; २ शिखा ३ दोनों भुजा ४ दोनों नेत्र; ५ और हथेली का शब्द ६ ऐसे ये छः अंगन्यास हैं इसको तीन बार स्पर्शकरे ॥

ओंकारस्यब्रह्माऋषिर्गायत्रीछन्दोऽग्निर्देवता शुक्लोवर्णोजपेविनियोगः। त्रिव्या-

हृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांस्यग्निवाय्वादित्यादेवता जपेविनियोगः । गायत्र्याविश्वामित्रऋषिर्गायत्रीछन्दः । सवितादेवताजपेविनियोगः ॥

पीछे ओंकारस्य० १ त्रिव्याहृतीनां० २ गायत्र्याः० ३ इन तीन विनियोगोंको पढ़कर जल छोड़ें अथवा ध्यानमात्रही कर लेवै। क्योंकि विनियोग ऋषिदेवता आदिके स्मरणका नाम है इनका अर्थ पहले प्राणायामके विनियोगमें लिख चुके हैं। केवल इतना ही विशेष है कि यहां जपमें विनियोग है ॥

ओं श्वेतवर्णासमुद्दिष्टाकौशेयवसनातथा । श्वेतैर्विलेपनैः पुष्पैरलंकारैश्च भूषिता । आदित्यमण्डलस्था च ब्रह्मलोकगताथवा । अक्षसूत्रधरादेवी पद्मासनगताशुभा ॥ इतिध्यात्वा ॥

'श्वेतवर्णा०' इति इन २ श्लोकोंसे गायत्रीका ध्यान करै

(श्लोकार्थः) गायत्री श्वेतवर्णवाली है और रेशमीवस्त्र धारण किये हुये तथा श्वेत चन्दन, श्वेतपुष्प, सफेद आभूषणों करके विभूषित (सुशोभित) सूर्य मण्डलमें अथवा ब्रह्मलोक में रहने वाली अक्षसूत्रधरा और पद्मासन (कमलासन) पर-स्थित है। इस प्रकार गायत्रीका ध्यान करना चाहिए।

तेजोसीतिदेवाऋषयोगायत्रीछन्दः शुक्रन्दैवतङ्गायत्र्यावाहने विनियोगः ॥

ऊपर तान्त्रिक ध्यान कहा है अब वेदोक्त गायत्रीमंत्रके ध्यान वा विनियोग और मंत्रके अर्थको कहते हैं। 'तेजोसि०, इस मंत्रके देवता ऋषि वा गायत्री छन्दके शुक्र देवता है यह गायत्रीके आवाहनमें विनि योग है॥

ओं तेजोसिशुक्रमस्यमृतमसिधामनामासिप्रियन्देवानामना धृष्टन्देवयजनमसि॥ इत्यावाह्य॥

हे गायत्रि! तुम शरीरको कान्ति बढ़ानेके कारण रूपसे तेज स्वरूप हो और स्निग्ध रूप होनेसे दीप्तिमान् हो अर्थात् तुम्हारे सेवन करनेवाला पुरुष सबका स्नेही होता है और

ब्रह्मस्वरूप होनेसे (अमृत) विनाश रहित देवता हो जहां चित्तकी वृत्ति जा लगती है ऐसा धाम स्वरूप हो अर्थात् तुम्हारे सेवकको देख कर सब जन नयन (प्रणाम) करते हैं और देवताओंके सर्वोत्तम प्रिय हो और देवताओंके पूजनको साधन करनेवाली हो इस मंत्रको बोलकर गायत्रीका आवाहन करे।

ओं गायत्र्यस्येकपदी द्विपदी त्रिपदी चतुष्पद्यपदसिनहिपद्यसे नमस्ते तुरीयायदर्शतायपदाय परोरजसेसावदोमित्युपस्थाय॥

ध्यानके मंत्रका अर्थ हे गायत्रि ! तुम त्रिलोकी रूपसे एक पदी हो यानी एक पैर वाली हैं और त्रयीविद्या वेद त्रयी रूपसे द्विपदी हो (यह दूसरा भी पद है) प्राणादिकोंकी आत्मा (पद) हो । ऐसी द्विपदी हो सूर्य मण्डलके अन्तर्गत पुरुष रूपसे रहती हो, ऐसे चतुष्पदी हो और अपने निरुपाधिक आत्मारूपसे अपदी हो अर्थात् ब्रह्मरूप होनेसे वह जाना नहीं जाता है। वह रूप चक्षुआदि इन्द्रियोंसे नहीं जाना जाता है सो ऐसे प्रधान तुम्हारे चौथे पदको ही नमस्कार है। कैसा

यह चौथा पद है कि (दर्शनीय) अर्थात् दीखता हुआ सा है साक्षात् इन्द्रियों से नहीं प्रत्यक्ष होता है, सब सङ्गों से परे (अलग) है अथवा सब लोकों से ऊपर तपता है तहां तुम्हारा स्वरूप है इस नमस्कारका यह प्रयोजन है कि जो यह तुम्हारी प्राप्तिमें विघ्न करता है ऐसा पाप शत्रु और इस पापका विघ्नकर्म मुझको कभी प्राप्त न हो ।

प्रातः प्राङ्मुखो मध्याह्ने सूर्याभिमुखस्तिष्ठन्सायंपश्चिमाभिमुखोपविश्योक्त जपविधिना गायत्रीं जपेत् ॥

विधि—प्रातःकाल पूर्वाभिमुख बैठकर, मध्यान्हमें सूर्यके सामने बैठकर, सायंकालमें पश्चिमकी तरफ मुख करके बैठकर कही हुई जपकी विधिसे गायत्रीका जप करे ।

जपस्वरूपं ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यंभर्गो देवस्य धीमहि । धियो योनः प्रचोदयात् ॥ इति प्रजप्य ततः प्रदक्षिणीकृत्यप्रणिपत्य देवागातुमिति मन्त्रेण विसर्जयेत् ।

देवागातु इति मन्त्रस्य मनसस्पति-ऋषिर्विराट् छन्दो वायुर्देवता गायत्री विसर्जने विनियोगः ॥

इससे विनियोग छोड़कर आगेके मंत्रसे गायत्रीका विसर्जन करे।

ॐ देवागातुविदोगातु वित्वागातुमित मनसस्पत इमन्देवयज्ञ ँ स्वाहा वातेधाः ॥

(गातु विदोदेवाः) हे जपरूप यज्ञके जाननेवाले देवो ! (गातुं) जपयज्ञकी समाप्तिको (वित्वा) जानकर (गातु-मित) आगेको जाइये। (हे मनसस्पते देव) हे हमारे मनके यज्ञके लिये प्रेरणा करनेवाले पालक परमेश्वर देव, (इमं) इस मेरे द्वारा किये हुए (यज्ञ) जपयज्ञको (स्वाहा) आपको समर्पण करता हूं (त्वं) आप (वाते) वायुदेवता में इसकी यज्ञको (धाः) स्थापन करें। अर्थात् सर्वव्यापक वायु सर्वदा हमारी रक्षा करे।

अथ सन्ध्याकाल निर्णयः ॥ उत्तमातारको पेता मध्यमा लुप्त तारका ॥ अधमासूर्यसहिता प्रातःसन्ध्यात्रिधास्मृता ॥१॥

मध्ये मध्याह्ने। उत्तमासूर्यसहिता। मध्यमालुप्तभास्करा

अधमातारकोपेतासायंसन्ध्यात्रिधास्मृता । इति सन्ध्याकाल-
निर्णयो धर्माब्धौ ॥

अथ संध्याकाल निर्णय । तारे दीखते हों वह उत्तम १, तारे नष्ट हो गये हों वह मध्यम २, सूर्य उदय हो जावें वह कनिष्ट ३ । ऐसे तीन प्रकारकी प्रातःकाल सन्ध्या है। मध्याह्न सन्ध्या मध्याह्नमें करना चाहिये । सूर्य दीखते समयमें उत्तम १, सूर्य छिप जावे जब मध्यम २, तारे दीखने लग जावें तब कनिष्ट ३ ऐसे सायंकालकी संध्या तीन प्रकारकी है ॥१॥

इति आयुर्वेदमहामहोपाध्यायेन रसायनशास्त्रिणा भागीरथ
स्वामिनायुर्वेदाचार्य्य सम्पादिता सन्ध्योपासन
प्रयोगविधि भाषाटीका समाप्ता ।

❊ अथ देवर्षिपितृतर्पणप्रारम्भः ❊
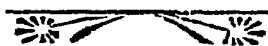
॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ पूर्वं संकल्पः कर्त्तव्यः ॥ ॐ अद्यब्रह्मणोह्निद्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्तैकदेशान्तर्गते असुकक्षेत्रे कलियुगे कलिप्रथमचरणे अमुक मासे अमुक पक्षे अमुक तिथावमुकवासरे अमुकगोत्रोत्पन्नः अमुकनामाहं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं देवर्षि पितृतर्पणमहङ्करिष्ये ॥ इति संकल्प्य ॥ ततो ब्रह्मादयोदेवा आगच्छन्तु गृह्णन्त्वेताञ्जलाञ्जलीन ॐ ब्रह्मा-तृप्यताम् ॐ विष्णुस्तृ० ॥ ॐ रुद्रस्तृ० ॥ ॐ प्रजापतिस्तृ० ॥ ॐ देवास्तृप्यं० ॥ ॐछंदांसितृ० ॥ वेदास्तृ० ॥ ॐ ऋषयस्तृ० ॐपुराणाचार्यास्तृ० ॥ गन्धर्वास्तृप्यं० ॥ ॐइतराचा-

र्यास्तृ० ॥ ॐ संम्वत्सराः सावायवास्तृप्य०॥ ॐ देव्यस्तृप्यन्तां ॥ ॐ अप्सरसस्तृप्यं० ॥ ॐदेवानुगास्तृ० ॥ ॐ नागास्तृ० ॥ ॐ सागरास्तृ० ॥ ॐ पर्वतास्तृ० ॥ ॐ सरितस्तृ० ॥ ॐ मनुष्यास्तृ० ॥ ॐयक्षास्तृ० ॥ ॐ रक्षांसि तृ० ॥ ॐ पिशाचास्तृ० ॥ ॐ सुपर्णास्तृ० ॥ ॐ भूतानितृ० ॥ ॐ पशवस्तृप्यं० ॥ ॐ वनस्पतयस्तृ० ॥ ॐ औषधयस्तृ० ॥ ॐ भूतग्रामश्चतुर्विधस्तृ० ॥ मरीचीस्तृ० ॥ अत्रिस्तृ० अंगिरास्तृ० पुलहस्तृ० पुलस्त्यस्तृ० क्रतुस्तृ० प्रचेतसस्तृ० वसिष्टस्तृ० भृगुस्तृ० नारदस्तृ० ॥ ततः कंटोत्तरीयम् ॥ उत्तराभिमुखो भूत्वा ॥ सनकादयस्सप्तमनुष्या आगच्छन्तु गृह्णान्त्वेताञ्जलाञ्जलीन् ॥ अत्राञ्जलिद्वयं दातव्यं सनकादिभ्यः ॐ सनकस्तृप्यताम् ॥ २ ॥ ॐ सनन्दनस्तृ० २ ॥ ॐ सनातनस्तृ० २ ॥ ॐ कपिलस्तृ २ ॥ ॐअसुरिस्तृ० २ ॥ ॐ वोढुस्तृ०

प्यतां २ ॐ पञ्चशिखस्तृ० २ ।ततोऽपसव्यं दक्षिणाभि मुखो भूत्वा ॥ कव्यवाडनला द्
योदिव्यपितर आगच्छन्तु गृह्णान्त्वेताञ्जला
ञ्जलीन् ॥ ॐ कव्यवाडनलस्तृप्यता मि
तिलोदकन्तस्मै स्वधा तस्मै स्वधा ३ ॥
ॐ यमस्तृ० २ ॥ ॐ अग्निष्वाताः पितरस्तृ-
प्यंतामि० तेभ्यः स्व० ३ ॥ ॐ अर्य्यमा पितर-
स्तृप्यंतामि० तेभ्यः स्व० ३ ॥ ॐ सोमपाः
पितरस्तृ० तेभ्यः स्व० ३ ॥ ॐ बर्हिषदः पित-
रस्तृ० तेभ्यः स्व० ३ ॥ ततो यमादि चतुर्दश
देवा आगच्छन्तु गृह्णन्त्वेताञ्जलाञ्जलीन् ॥ ॐ
यमाय नमः ३ ॥ ॐ धर्मराजाय नमः ३ ॥ ॐमृ-
त्यवे नमः ३ ॥ ॐ अन्तकाय नमः ३ ॐ वैव-
स्वताय नमः ३ ॥ ॐ कालायनमः ३ ॥ ॐसर्व-
भूतक्षयाय नमः ३ ॥ ॐ औदुम्बराय नमः ३ ॥
ॐ दध्नाय नमः ३ ॥ ॐ नीलाय नमः ३ ॥
ॐ परमेष्ठिनेनमः ॥३॥ ॐ वृकोदरायनमः ॥३।

चित्रायनमः ३ ॥ ॐचित्रगुप्तायनमः ॥ ततोऽमु-
कगोत्रा अस्मत्पितर आगच्छन्तु गृह्णन्त्वेता-
ञ्जलाञ्जलीन् ॥ अमुकगोत्रोऽस्मत्पिता अमुक-
शर्मा वसुरूप तृप्यतामिदं जल तस्मै स्वधा० ३॥
अमुक गोत्रोऽस्मत्पिता मह: अमुकशर्मा रुद्ररूप-
स्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा० ॥ १ ॥ अमुक-
गोत्रोऽस्मत्प्रपितामहः अमुकशर्मा आदित्यरूप-
स्तृप्यता० तस्मै स्व० ३ ॥ अमुकगोत्राऽस्मन्मता
अमुकीदेवी गायत्रीरूपा तृप्यतामिदं जल तस्यै
स्वधा ३॥ अमुकगोत्राऽस्मत्पितामही अमुकीदेवी
सावित्रीरूपा तृप्यतामिदञ्ज तस्यै स्वधा ३॥ अमु-
कगोत्रा ऽस्मत्प्रपितामही अमुकी देवी सरस्वती-
रूपा तृप्यतामिदं जलंतस्यै स्वधा ३ ॥ अमुक
गोत्रोऽस्मन्मातामह अमुकशर्मा अग्निरूपस्तृ-
प्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा ३ ॥ अमुकगोत्रोऽस्म-
त्प्रमातामहः अमुकशर्मा वरुण रूपस्तृप्यतामिदं
जलं तस्मै स्वधा ३ ॥ अमुकगोत्रोऽस्मद्वृद्धप्रमा-

तामहः अमुकशर्मा प्रजापति रूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा ३ ॥ अमुकगोत्राऽस्मन्मतामही अमुकी देवी गायत्रीरूपास्तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा ३ ॥ अमुकगोत्राऽस्मत्प्रमातामही अमुकी देवी सरस्वतीरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा ३ ॥ अमुकगोत्राऽस्मद्वृद्धप्रमातामही अमुकी देवी सरस्वती रूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा ३॥ अमुकगोत्रोऽमुकशर्मा गुरुस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्व० ॥ अमुकगोत्राऽस्मत्० पत्नी अमुकोदेवी तृप्यतामिदं जलं तस्य स्वधेत्यादि । ततोये ये बान्धवाबान्धवायेन्यजन्मनिबान्धवाः तेसर्वेतृप्तिमायान्तुयेचास्मत्तोयाभिकाङ्क्षिणः ॥ येमेकुलेलुप्तपिण्डाः पुत्रदारादिवर्जिताः ॥ तेषांहिदत्तमक्षय्यमिदमस्तुतिलोदकं ॥ आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं देवर्षिपितृमानवाः ॥ तृप्यन्तुपितरः सर्वेमातृमातामहादयः । अतीतकुलकोटिनांसप्तद्वीपनिवासिनां ॥ आब्रह्मभुवनांल्लोकादिदमस्तुति-

लोदकं ॥ ततः स्ववस्त्रं निष्पीडयेत् ।
येकेचास्मत्कुले जाता अपुत्रागोत्रिणोमृताः ॥
तेगृह्णन्तु मयादत्तंवस्त्रनिष्पोडनोदकम् ॥ ततो
भोष्मतर्पणम् ॥ भोष्मः शान्तनवोवीरः सत्य-
वादीजितेन्द्रियः ॥ आभिरद्भिर वाप्नोतिपुत्रपो
त्रोचितांक्रियाम् ॥ वसूनामवतारायशन्तनोरा
त्मजायच ॥ अर्ध्यंददामिभीष्मायआबाल्यब्रह्मचा
रिणे ॥ ततो यज्ञोपवीती भूत्वाऽऽचम्यसूर्याया-
र्घ्यंदद्यात् ॥ सूर्य्यार्घ्यं मन्त्रः एहिसूर्यसहस्रांशोते-
जोराशेजगत्पते अनुकम्पयमांभक्त्यागृहाणार्घ्यं-
दिवाकरः । इति सूर्यायार्घ्यंदत्वा ॥ यस्यस्मृ-
त्याचनामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु ॥ न्यूनंसंपूर्ण-
तांयातिसद्यो वंदेतमच्युतम् ॥

समाप्तः

*

इसे _

सम्पूर्ण माननीय विद्व   है कि

भारत विख्यात श्रीवे   म्बई

की समस्त पुस्तकें जैसे, वैदि., वदान्त, पुराण, उप-

पुराण, इतिहास धर्मशास्त्र, योगवैशेपिक, न्याय स

मीमांसा, साहित्य, काव्य, कोप, अलङ्कार, चम्पू,

नाटक, वैद्यक, कामशास्त्र, ज्योतिष, किस्से. क...

उपन्यास, स्तोत्र, छन्द, लावनी ख्याल—और हर तरह

की सटीक, भापाटीका, मूल. केवल भाषाके ग्रन्थोंके

मिलनेकी सुविधा आजतक, इस कलकत्ता महानगरीमें

नहीं थी, इसका यथोचित प्रबन्ध करके यह त्रुटि दूर

कर दी गई है, इसके अतिरिक्त निर्णयसागर प्रेस बम्बई,

पूना, बनारस, लखनऊ और अन्यान्य जगहोंकी पुस्तकें

तथा विलायत आदि की अप्राप्य पुस्तकें हर वक्त

विक्रयार्थ प्रस्तुत रहती हैं, और ग्राहकोंको तथा

दूकानदारोंको उचित कमीशन भी दिया जाता है।

विशेष जाननेके लिये बड़ा सूचीपत्र मंगाकर देखिये।

बम्बई पुस्तक एजेन्सी,

१९५।१, हरिसन रोड, कलकत्ता।

मुद्रक—पं० तेजनारायण वा. पेयी द्वारा 'कुमार प्रेस'
(१०२ मुक्ताराम बाबू स्ट्री., कलकत्ता) में मुद्रित।